International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

औपनिवेशिक काल में विनिर्माण उद्योगों के विकास की रूपरेखा :– जूट उद्योग के संबंध में (1858–1947 ई0)

पुनीत कुमार झा
शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में बड़े पैमाने पर आधुनिक उद्योग–धंधों का विकास प्रारंभ हुआ। इन उद्योगों में जूट उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग और लोहे एवं इस्पात उद्योग महत्वपूर्ण थे। हालांकि इन उद्योगों के उदभव में ब्रिटिश पूँजीपतियों के प्रयास अहम थे। इस काल में सबसे वृहत स्तर पर विकसित होने वाला आधुनिक उद्योग जूट उद्योग था।

– जूट उद्योग –

बिहार और बंगाल में जूट का उत्पादन प्राचीन काल से होता आ रहा था क्योंकि इसके पैदावार के लिए उचित भौगोलिक दशा उपलब्ध है। जूट से रस्सी, बोरियों (अनाज के पैकेजिंग के काम आती है) और मोटे वस्त्रों का निर्माण होता है। इन वस्तुओ का निर्यात 18 वीं सदी के मध्य से हो रहा था। कच्चे जूट को धान के साथ धन खेतों में उगाया जाता रहा और मांग के अनुसार आपूर्ति को विनियमित किया जाता रहा इसके डंडों का इस्तेमाल ईंधन के रूप में और झोपरियों बनाने में किया जाता था।

ईस्ट इंडिया कंपनो में भारतीय कच्चे जुट के निर्यात को अधिक महत्व नहीं दिया क्योंकि डंडी (स्काटलैंड) में उपलब्ध प्रौद्योगिकी के आधार पर उसका कोई उपयोग नहीं था। लेकिन 1838 ई0 में स्काटलैंड के विनिर्माताओं ने तकनीकीं कठिनाईयों को दूर कर लिया। और कच्चे जूट का प्रयोग पारंभ कर दिया जो काफी सस्ता था। अब 1840 से जूट की वस्तुओं का औद्योगिक उत्पादन जोर–शोर से प्रारंभ हुआ। दूसरी घटना–1854 ई0 के क्रिमिया युद्ध ने रूस से सन की आपूर्ति को बंद कर दिया। इसकी वजह से भारतीय जूट की मांग बढ़ गई और 1870 ई0 तक डंडी का जूट की वस्तुओं पर एकाधिकार हो गया।[1]

जूट उद्योग के लिए दूनिया का माहौल 1850 के बाद काफी अनुकूल हो गयाा और उसकों अपनी उन्नति के अवसर मिला। इस समय मुक्त व्यापार के सिद्धांत, स्वेज नजर का निर्माण, वैश्विक बाजार का उदर, वाणिज्य बंदरगाहों का विकास, के कारण विश्व के व्यापार का विकास हुआ। व्यापार बढ़ने के कारण सामानों के पैकिंग की मांग बढ़ी। जिसके फलस्वरूप जूट उद्योग के भाग्य के दरवाजे खुल गये। भारत में जूट उद्योग के विकास की ओर से जार्ज ऑकलैंड नामक उद्यमी का ध्यान गया। उचित भौगोलिक दशा एवं विश्व बाजार में जूट की बढ़ती मांग ने ऑकलैंड को 1855 ई0 में हुगली नदी के तट पर रिसड़ा में एक जूट कताई मिल लगाने को विवश कर दिया। पास में ही कच्चे जूट, सस्ते श्रम और प्रचुर जल आपूर्ति की उपलब्धता ने ऑकलैण्ड के अरमानों को जैसे चार–चॉद लगा दिये। साथ ही मजदूरों के काम करने की शर्त्तो, स्थितियों, भुगतान से संबंधित श्रम कानूनों का भी अभाव था।[2]

ऑकलैण्ड ने बोर्नियों कंपनी को जूट मिल लगाने का काम सौंपा। 1859 ई0 में पहली बड़े पैमाने की जूट कटाई और बुनाई मिल लगाई। यह मिल पावलूम और हैंडलूम दोनों पर आधारित थी। इसने इतनी सफलता पाई कि मात्र 5 वर्षो में अपनी क्षमता को दोगुना कर लिया। 1873 तक भारत में 5 जूट मिल लग चुके थे। 1880 ई0 तक जूट उद्योगमें 50,000 लोग काम करने लगे। [3]

1880 ई0 में आटे और नमक के पैकिंग के लिए जूट से बनी बोरी ब्रिटेन में बिकने लगी। 1875–76 और 1913–14 के बीच भारत से निर्यात की जाने वाली कच्चे जूट का बजन 195 : तक बढ़ गया। जूट से बने उत्पादों का निर्यात तो और भी बढ़ा। जूट की बोरियों का निर्यात 19 गुणा और जूट वस्त्रों का निर्यात 172 गुणा बढ़ा। श्रम सस्ता था तो लागत भी कम आई। जूट मिलें तुरंत ही विश्व बाजार के लिए प्रमुख निर्यातक बन गई। 1913 ई0 में संयुक्त राज्य अमेरिका को भारतीय जूट मिलों ने 72 लाख पौंड के जूट उत्पाद निर्यात किये जबकि ब्रिटेन में मात्र 15 लाख पौण्ड की। [4]

व्यापार में उतार–चढ़ाव की समस्या आती रहती हैं ऐसा जूट उद्योग के साथ भी हुआ। इस समस्या को दूर करने के लिए इण्डियन जूट मिल एसोसिएशन (आई0 जे0 एम0 ए0) का गठन 1884 में किया गया जो 1902 तक प्दकपंद श्रनजम डंदनबिजनतमे के नाम से जानी जाती थी। इस संगठन का मुख्य कार्य अति उत्पादन और अधिक क्षमता की समस्या से निबटना तथा कीमतों के स्तर को बनाये रखना था। [5]

प्रथम विश्व युद्ध तक जूट उद्योग पर यूरोपीय पूँजी मैंनेजिंग एजेंटों और तकनीकी लोगों का बर्चस्व रहा। एक जूट मिल लगानें के लिए अधिक पूँजी की आवश्यकता नहीं थी। 1881–82 में 9–10 लाख में जूट मिल लग सकता था और बीसवीं सदी के आरंभ तक में 15 लाख खर्च आते थे। [6] फिर भी भारतीय उद्यमी अपने को इस क्षेत्र में सत्यापित नहीं कर सके। ऐसा कहा जाता है कि भारतीयों को यूरोपीय उद्यमीयों ने इस क्षेत्र में प्रवेश से रोका। जबकि इस तथ्य से मौरिस नकारते है। उनका मानना है कि भारतीय अपनी पूँजी इसलिए नहीं लगा सके क्योंकि प्रतिफल की दौर उतनी उँची या बेहतर नहीं थी। जों भारतीय को आकर्षित करती। [7] फिर भी जूट उद्योग में भारतीयां के सांठ–गांठ की भूमिका तो कुछक हद तक रही ही होगी।

प्रथम विश्व युद्ध छिड़ने के कारण भारत को निर्यात बाजार के एक बड़े भाग से हाथ होना पड़ा। फिर भी उद्योग की समृद्धि पर कुछ खास असर नहीं पड़ा। रूस से सन का आयात बंद होने के कारण ब्रिटेन में जूट की मांग उठी, उद्योग की सहायता के लिए अन्य सभी जरूरी कदम उठाये गये।

राजस्व जुटाने के लिए 1916 में निर्यात शुल्क लगाने तथा 1917 और 1918 के बीच रूपये का विनिमय मूल्य पड़ता है। जूट की विनिर्मित वस्तुओं को अनियंत्रित कीमतों, सैनिक कार्यो के लिए जूट उत्पादों की बढ़ती मांग, मिलों को नियंत्रित कीमतों पर पहले से अधिक कच्चे जूट की आपूर्ति तथा कारखाना कानून में ढ़ील के परिणाम स्परूप जूट उद्योग को भारी मुनाफे प्राप्त हुए। अमिय बागची के अनुसार मिलों को सस्ता श्रम मिल गया जो रेलवे निर्माण तथा अन्य बड़े लोकनिर्माण कार्यो के लड़ाई के कारण ठप होने से उपलब्ध हुआ। इस प्रकार वे अधिकांश युद्धकाल में 80 घंटे का सप्ताह लागू रख सके। [8] उनके मुनाफे बढ़े और वे 50: से 75: हो गए।

जूट मिल मालिकों की तो चॉदी रही परंतु जूट उत्पादकों को कोई खास फायदा नहीं हुआ। कच्चे जूट पर सरकार का नियंत्रण जारी रहा और सरकार ने निर्यात करने के बदले किसानों को कच्चा जूट मिलों को देने को विवश किया। कच्चे जूट के निर्यात का मूल्य 1913–14 में 30 करोड़ 80 लाख था जो 1916–17–18 में 6 करोड़ 40 लाख हो गया। जूट मिलों के स्वामित्व का क्या हुआ इसके बारे में बागची ने कहा कि भारतीयों ने युद्ध के दौरान जूट मिलों की पूँजी का एक बड़ा भाग हफिया लिया [9] जबकि मौरिस ने इस विचार पर असहमति जतायी है उनका मानना है कि हमे अब तक पता नहीं हे कि स्वामित्व का क्या हुआ। कुछ सुझाव है कि जूट उद्योग में भारतीयों ने अपनी शेयुधारिता बढ़ी ली, परंतु यह स्पष्ट है कि नियंत्रण और प्रबंधन के हाथ में ही रहा। [10] भारतीयों ने जूट उद्योग पर अपना स्वामित्व कसे बढ़ाया इसके बारे में बागची का कथन विचारणीय है।

इसका स्पष्टीकरण यह नहीं हो सकता कि यूरोपीय लोग संबंधित कंपनियों के अपने शेयरों को बेचने के लिए तत्पर थे क्योंकि 1926 तक जूट उद्योग के शेयरों पर काफी उंचे लाभांश मिलते रहे। विश्वसनीय कारण यह है कि युद्ध के दौरान कलकत्ता के ब्रिटिश व्यवसायियों का एक बड़ा हिस्सा या तो लड़ाई के मोर्चे पर चला गया अथवा युद्ध संबंधी अन्य कार्य में लग गया। [11]

लड़ाई समाप्त होने पर दो भारतीय प्रबंधित कंपनियों, विड़ला जूट मैन्युफैक्चर और हुकमचंद जूट मिल्स लिमिटेड ने जूट उद्योग में प्रवेश किया। मौरिस की उपेक्षा बागची का स्पष्टीकरण अधिक विश्वसनीय लगता है।

युद्ध संबंधी मांग तो 1918 तक समाप्त हो गई, परंतु जूअ उद्योग की समृद्धि बरकरार रही। युद्ध–पीड़ित देशों में बड़े पैमाने पर खाद्यान्न ले जाने की आवश्यकता के कारण जूट उत्पादों की मांग में भारी वृद्धि हुई। आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, संयुक्त राज्य अमरीका, अर्जेटिना और क्यूबा ने भारी मात्रा में जूट उतपाद मंगाए। परिणामतः कच्चे जूट और जूट की विनिर्मित वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा। यहाँ उल्लेखनीय है कि आई0 जे0 एम0 ए0 की सदस्य मिलों को अपना उत्पादन बढ़ाने की इजाजत नहीं मिली क्योंकि उन्होंने 1921 में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए थे जिसके तहत सप्ताह में केवल 54 घंटे ही काम करने थे। यह समझौता 1920 के पूरे दशक के दौरान लागू रहा। उत्पादन में विस्तार के लिए मुख्यतया गैर–सदस्य मिलें ही जिम्मेदार रहीं। भारतीया ने 1920 के दशक के दौरान कई नई मिलें लगाई।

1920 का दशक जूट उद्योग के लिए समृद्धि का दशक रहा। मिलों की कुल संख्या 1921–22 के 81 से बढ़कर 1929–30 में 98 पर पहुँच गई। इसी दौरान जूट उत्पादों के निर्यात का मूल्य 30 करोड़ रूपये से बढ़कर 52 करोड़ रूपया हा गया। जूअ मिलों में काम करने वालों की संख्या–1922 में 3,20,000 थी जो 1928 में 3,50,000 हो गई।

महामंदी ने जूट उद्योग की समृद्धि के आगे विराम लाग दिया। कच्चे जूट और जूट उत्पादों के निर्यात में तेज गिराबट आई और मुनाफे की दर भी घट गई। निर्यातित कच्चे जूट का मूल्य 1928–29 के 32,34,92,000 रूपये से गिरकर 1933–34 में 9,73,03,000 रूपये से 21,37,49,000 रूपये हो गया। प्रदत्त पूंजी के प्रतिशत के रूप में निवल मुनाफे 1928–29 में 42.5 थे जो 1931–32 में 2.1 पर आ गए।

मंदी ने एक ओर आई0 जे0 एम0 एम0 ए0 के वलशाली और कमजोर सदस्य–मिलों तथा, दूसरी ओर, सदस्य–मिलों और आई0 जो0 एम0 ए0 के दायरे से बाहर रहने वाले भारतीय उद्यमियों द्वारा

लगाई गई मिलों के बीच तनाव बढ़ा दिए। तनाव और झगड़े काम के घंटों और क्षमता के विस्तार के संबंध में समझौता करने को लेकर उत्पन्न हुए थे। नई मिलों का कहना था कि उनके पास पर्याप्त आरक्षित कोष नहीं है इसएिल वे काम के घंटों और क्षमता के इस्तेमाल पर रोक लगाने के संबंध में समझौता नहीं कर सकते। किंतु आई0 जे0 एम0 एम0 की सदस्य–मिलों के बीच सप्ताह में 54 घंटे काम करने पर सहमति हो गई। इसे 30 जून 1930 के बाद लागू करना था जिससे उत्पादन को घटाकर तत्कालीन कीमत–स्तर को बनाए रखा जा सके। मार्च 1931 के बाद काम के घंटो को घटाकर 40 कर दिया गया। इसके अतिरिक्त सदस्यों के बीच हर महीनें एक सप्ताह काम ने करना तथा 15 प्रतिशत करघों को पयोग में न लाना तय हुआ।

आई0 जे0 एम0 ए0 के अंदर मिलों के बीच गंभीर तनाव पैदा हो गए और गैर सदस्य–मिलों ने धमकिया दी। एक समय तो आई0 जे0 एम0 ए0 का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया। बंगाल के गवर्नर द्वारा बीच–बचाव के बाद जाकर सुलह हुई। [12]

मंदी के दौरान काम के घंटों में कमी तथा करघों को काम में न लाने के फैसले के कारण श्रमिकों की छंटनी हुई। श्रमिकों की संख्या–1929 में 3 लाख 40 हजार थी जो घटकर 1933 में 2 लाख 66 हजार हो गई। उसके बाद काम पर लगे लोगों की संख्या में धीरे–धीरे वृद्धि हुई, परंतु वह द्वितीय विश्व युद्ध के छिड़ने के समय ही 3 लाख पर पहुँच पाई।

> इस काल के दौरान मिल कर्मियों की उत्पादकता में करीब 40 प्रतिशत वृद्धि हुइ। 1927 में प्रति करघा 6.5 मिल कर्मी थे परन्तु एक दशक बाद प्रति करघा केवल 4.5 मिल कर्मी रह गए। 1927 में एक मजदूर 17.1 गांठ कच्चा जूट इस्तेमाल में लाता था। वहीं 1937 में वह 23.6 गांठ प्रयोग में लाने लगा। चूँकि कृषिजन्य वस्तुओं की कीमतों में गिराबट ने मिल कर्मियों की वास्तविकता मजदूरी को बढ़ा दिया था इसलिए मौद्रिक मजदूरी में थोड़ी बहुत कमी लाई जा सकी और इस प्रकार उत्पादकता में तेज वृद्धि से मजदूरी का बिल नहीं बढ़ा। [13]

मंदी के कारण कच्चे जूट की कीमतें गिरी और इससे मिलों को फायदा पहुंचा। सरकार द्वारा किसानों को जूट की खेती में कटौती के लिए सहमत कराने के प्रयास विफल रहे। किसानों को जूट की जो भी कीमतें मिली उनका एक बड़ा हिस्सा बिचौलियों ने ले लिया। [14]

जूट मिलें मजदूरों और किसानों, दोनो, के मत्थे अपने मुनाफे का स्तर बनाए जख सकीं। मंदी ने हुगली तट–स्थित जूट मिलों के भविष्य के आगे गंभीर प्रश्नचिन्ह लगा दिया। इसके लिए उन्होंने विपणन की और तकनीकी समस्याओं में शोध की ओर कोई ध्यान नहीं दिया था क्योंकि वे सतत विस्तारशील बाजार और बढ़ती हुई लाभप्रदता की स्थिति में काम कर रहीं थी। अब पेपर की थैलियों, सूती कपड़े के थैलों और थैलों को बनाने के कपड़ो, अन्न–भंडार आदि के कारण आए खतरे बहुत कुछ वास्तविक और भयंकर हो गए। उन्होंने जूट की वस्तुओं के बाजार को संकुचित करना प्रारंभ कर दिया था। समस्या के अध्ययन के लिए समितियां बनाई गई। अंततोगत्वा सरकार ने इंडियन सेंट्रल जूट कमेटी (भारतीय केंद्रीय जूट समिति) की स्थापना की, जिसे उद्योग के सामने आई समस्याओं और कठिनाईयों का अध्ययन करने को कहा गया। उसे उनसे उबरने के उपाय सुझाने का आग्रह भी किया गया। आई0 जे0 एम0 ए0 ने एक छोटी प्रयोगशाला और एक सूचना और सांख्यिकी विभाग की भी स्थापना की।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रेत की बोरियों और बोरों जैसे जूट उत्पादों की मांग में भारी वृद्धि हुई किंतु, साथ ही, कतिपय महत्वपूर्ण बाजारों के हाथो से निकल जाने और समुद्री जहाज की सुविधाओं के अभाव के कारण कठिनाईयां भी आई। शत्रु देशों के बाजार में प्रवेश बंदी होने से जूट की 31 प्रतिशत वस्तुओं का निर्यात समाप्त हो गया। इन सब कठिनाईयों के बावजूद मुनाफों का सूचकांक बढ़ गया : यदि 1939 को आधार वर्ष माने तो 1945 मे समस्त उद्योगों के मुनाफों का सूचकांक बढ़ कर 234 हो गया जबकि जूट के लिए ह 328 पर पहुँच गया। [15]

युद्ध समाप्त होने के बाद भी समृद्धि का दौर दो वर्षो तक चलता रहा जब मांग में लगातार वृद्धि होती रही। उसके बाद देश आजाद हुआ और साथ ही उसका विभाजन भी हुआ जो जूट उद्योग के लिए विध्वंसकारी सिद्ध हुआ क्योंकि अंधिकांश जूट उत्पादक क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान (अब बंगलादेश) में चले गए जबकि मिलें भारत में रह गई। भारत और पाकिस्तार के परस्पर संबंध इतने बुरे और कटु थे कि सहयोग की बात कौन करे, कोई तात्कालिक व्यवस्था भी संभव नहीं हुई। हम आजादी के बाद की स्थितियों पर विचार नहीं करेंगे क्योंकि वे हमारे द्वारा चुनी गई समय की अवधि से बाहर हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. धर्मा कुमार : द कैम्ब्रिज इकोनोमि हिस्ट्री ऑफ इण्डिया।
2. धर्मा कुमार : द कैम्ब्रिज इकोनोमि हिस्ट्री ऑफ इण्डिया।
3. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।
4. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।
5. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।
6. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।
7. अमिय कुमार बागची :– द पॉलिटिक्स इकोनोमि ऑफ अन्डरडेभलपमेन्ट
8. अमिय कुमार बागची :– द पॉलिटिक्स इकोनोमि ऑफ अन्डरडेभलपमेन्ट।
9. अमिय कुमार बागची :– प्राईवेट इनवेस्टमेंट इन इण्डिया।
10. अमिय कुमार बागची :– प्राईवेट इनवेस्टमेंट इन इण्डिया।
11. धर्मा कुमार : द कैम्ब्रिज इकोनोमि हिस्ट्री ऑफ इण्डिया।
12. अमिय कुमार बागची :– प्राईवेट इनवेस्टमेंट इन इण्डिया।
13. अमिय कुमार बागची :– प्राईवेट इनवेस्टमेंट इन इण्डिया।
14. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।
15. गिरीश मिश्र : आधुनिक भारत का आर्थिक इतिहास।